शिक्षकों को तैयार करने की चुनौतियाँ

ऋषभ कुमार मिश्र*

इस लेख में राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षक-शिक्षा में सुधार के लिए जारी प्रयासों को ध्यान में रखते हुए शिक्षकों को तैयार करने की कुछ चुनौतियों को उभारा गया है। लेख में चर्चा की गई है कि शिक्षक-शिक्षा की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए उसे उच्च शिक्षा के दायरे में लाना होगा। इसकी पाठ्यचर्या के द्वारा सिद्धांत और अभ्यास में मजबूत अन्त:संबंध को स्थापित करना होगा। शिक्षक-शिक्षा केंद्रों के अन्तर्गत शिक्षकों को शोध के क्षेत्र में आगे लाने के लिए प्रयास करना होगा। इन तकनीकी पक्षों के साथ यह भी आवश्यक है कि शिक्षक-शिक्षा द्वारा मानवीय मूल्यों जैसे-शांति, स्वतंत्रता, बंधुत्व, सामाजिक न्याय का पोषण हो। शिक्षक-शिक्षा की पूरी प्रक्रिया ऐसी हो कि वह भावी शिक्षकों में अनवरत् सीखने की ललक को जगाए और वे खुद तथा अपने विद्यार्थियों की रचनात्मकता को दिशा देने के लिए तत्पर हों।

शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009, के द्वारा देश के प्रत्येक बच्चे को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान कर दिया गया। सही अर्थों में शिक्षा का मौलिक अधिकार देश के बच्चों के लिए तभी महत्वपूर्ण साबित होगा जबकि सभी बच्चों को औपचारिक शिक्षा का मौका मिले और उनके सीखने के अनुभव, बोझ तथा तनाव के बजाय आनंदमय हों। स्कूलों में इस प्रकार का सीखने का माहौल बनाने में संस्थागत संसाधनों की तैयारी के अतिरिक्त शिक्षकों की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है। शिक्षक ही विद्यालय के सीखने के वातावरण में रोमांच, उत्साह और सृजन का रंग भरते हैं (या रंग विहीन करते हैं)। विद्यालयी संस्कृति में शिक्षक की भूमिका के निर्वहन के लिए शिक्षकों को तैयार करने में शिक्षक-शिक्षा की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। अत: ज़रूरी है कि शिक्षकों की तैयारी भी गुणवत्तापूर्ण हो। लेकिन आज शिक्षक-शिक्षा के ढाँचे, पाठ्यक्रम और इसके विभिन्न स्तरों के बीच संबंधों को लेकर कई हल्कों

* *सहायक प्रोफ़ेसर*, शिक्षा विभाग, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)

में असंतोष व्यक्त किया जा रहा है। शिक्षक-शिक्षा की वर्तमान दशा के बारे में आम सहमति है कि यह केवल ऐसा 'अनुष्ठान' है जिसमें सीमित समय में, 'निश्चित' संख्या में पाठयोजना को मशीनी ढंग से पूरा कर देना लक्ष्य है। क्षेत्र-अनुभव से जुड़े अन्य कार्य केवल नाम मात्र के हैं। प्रायः इनमें समूह में कार्य करने, समुदाय में कार्य करने, नैतिकता और अनुशासन का अभ्यास करने और क्षेत्र भ्रमण की 'दिखावटी' गतिविधियाँ की जाती हैं, जो केवल 'मानकों' की खानापूर्ति होती हैं। सवाल यह है कि इस पाठ्यक्रम से किस प्रकार के शिक्षकों को तैयार किया जाता है? इस प्रकार के पाठ्यक्रम के द्वारा प्रशिक्षु-शिक्षक न तो विषय और शिक्षणशास्त्र की सैद्धान्तिक समझ को बड़े दायरे में देख पाते हैं न ही उन्हें अपने अभ्यास पर सोचने-समझने का मौका मिलता है। वे न तो विद्यार्थियों के विकासात्मक संदर्भ को समझने की दृष्टि अर्जित करते हैं और न ही समुदाय से विद्यालय के पारस्परिक संबंध की महत्ता की परख कर पाते हैं। वे केवल प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के साथ खुद को जमाने के लिए तैयार कर पाते हैं। यहाँ 'ज़माना' इस अर्थ में महत्वपूर्ण है कि वे परंपरागत शिक्षा प्रणाली के साथ कदमताल करते हैं।

वर्तमान में राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षक-शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए बड़ी कवायद की जा रही है। इस पूरे प्रयास में हमें कुछ सवालों को ध्यान में रखना होगा। हमें ध्यान रखना होगा कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को उपलब्ध कराने के लिए पूर्व प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक व उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के लिए शिक्षकों को तैयार करने की आवश्यकता है। अतः शिक्षक-शिक्षा के अंतर्गत इन सभी स्तरों के शिक्षकों की तैयारी को शामिल किया जाए। यद्यपि किसी न किसी रूप में इन सभी स्तरों के लिए शिक्षकों की तैयारी का ढाँचा तो मौजूद है लेकिन उनमें आन्तरिक विसंगतियाँ हैं। अभी शिक्षक-शिक्षा का जो ढाँचा है, उसमें प्राथमिक शिक्षा के लिए 12वीं के बाद ही शिक्षक-प्रशिक्षण दिया जाता है जबकि पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिए शिक्षकों की तैयारी का कोई विकसित और स्थापित ढाँचा नहीं है। कुछेक 'डिप्लोमा कोर्सों' से काम चलाया जा रहा है। माध्यमिक और उसके आगे के स्तरों के लिए कम से कम स्नातक और परास्नातक की योग्यता आवश्यक है। इस व्यवस्था को देखें तो पता चलता है कि ऐसा माना गया है कि कुछ स्तरों के लिए विषय ज्ञान और उच्च शिक्षा के अनुभव का महत्व कम है जबकि कुछेक के लिए अधिक। यह ढाँचा यह भी संकेत देता है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षक की भूमिका 'साक्षरता' दे देने तक सीमित है, अतः उसे विषय या शिक्षणशास्त्र से संबंधित उच्च शिक्षा की आवश्यकता नहीं है। इस स्थिति में यह सवाल स्वाभाविक ही है कि क्या बच्चों के साथ सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में उनकी अवस्था को ध्यान में रखते हुए उनकी कौतूहल और जिज्ञासा को कमतर आँका जा सकता है? क्या शिक्षकों की योग्यता और प्रशिक्षण को पदानुक्रमिक तरीके से ही देखा जाना चाहिए? क्या शिक्षण व्यवसाय के प्रवेश बिंदु को कमज़ोर बनाकर शिक्षक को भविष्य में व्यावसायिक गतिशीलता से वंचित करना उचित है? इन सवालों के प्रति राय बनती है कि शिक्षण के व्यवसाय को समग्र

रूप में देखा जाना चाहिए। उनके प्रवेश और प्रशिक्षण का पैमाना समान हो, जिसमें उनकी विशेषज्ञता के विकास के समानान्तर क्षेत्र हो। अर्थात् एक समान न्यूनतम डिग्री के बाद शिक्षक-शिक्षा में प्रवेश दिया जाए। इस स्तर पर प्रशिक्षु की रूचि और अकादमिक पृष्ठभूमि को देखते हुए उसे स्तर विशेष-प्राथमिक, माध्यमिक आदि के लिए तैयार किया जाए। ऐसा करने का एक दूरगामी प्रभाव और भी होगा। किसी भी अवस्था के बच्चों के लिए सीखने-सिखाने का माहौल उनके सृजनात्मक चिन्तन को मजबूत करने वाला हो। इसके लिए विषय की समझ होना भी एक महत्वपूर्ण पक्ष है। उच्च शिक्षा के अंतर्गत शिक्षक-शिक्षा को रखने से इस पक्ष को मज़बूती मिलेगी।

जैसे ही हम शिक्षक-शिक्षा के प्रत्येक प्रकार और स्तर को उच्च शिक्षा के दायरे में रखने की माँग करते हैं, वैसे ही एक नई चुनौती हमारे सामने खड़ी हो जाती है। हमें अपनी उच्च शिक्षा व्यवस्था की नब्ज़ को भी टटोलना होगा। यह सवाल करना होगा कि क्या आज उच्च शिक्षा विद्यार्थियों में स्वतंत्र *चिंतन पर आधारित व्यापक दृष्टिकोण का विकास* कर रही है या केवल विद्यार्थियों को 'रट्टु तोते' की ही संस्कृति में ढाल रही है। यह आसानी से अवलोकित किया जा सकता है कि विद्यालयी शिक्षा की तुलना में उच्च शिक्षा 'पाठ्य-पुस्तक की संस्कृति' और परीक्षात्मक अध्ययन को पोषित करती है। उच्च शिक्षा विद्यार्थी को पहचान निर्माण के बजाय पहचान विभ्रम की ओर ढकेलती है, जहाँ विद्यार्थी खुद का चिंतन और विचारों के विकास के बजाय शार्टकट खोजता रहता है। आज ज़रूरत है कि उच्च शिक्षा में अध्ययन-अध्यापन के तरीकों को भी शिक्षा के समकालीन सरोकारों से जोड़ा जाए। उसके अभ्यासों को अद्यतन और व्यावहारिक किया जाए। ऐसा करने पर ही उच्च शिक्षा, शिक्षक-शिक्षा को सशक्त करने में अपनी भूमिका अदा कर पाएगी।

शिक्षक-शिक्षा में सुधार के प्रयासों के जिस पक्ष से आम जनता सर्वाधिक परिचित है वह है शिक्षक-शिक्षा की अवधि। शिक्षक-शिक्षा की अवधि के मुद्दे पर चर्चा ने अन्य पक्षों की चर्चा को गौण कर दिया है। आम आदमी इस पूरी बहस में केवल यह समझ पा रहा है कि शिक्षक-शिक्षा में सुधार का प्रयास केवल अवधि से जुड़ा हुआ है। इसे वह प्रायः केवल बी.एड. के पाठ्यक्रम से जोड़कर देख रहा है और चिन्तित है कि यह पाठ्यक्रम दो साल का होने जा रहा है। अवधि के प्रश्न पर अति केंद्रित हो जाना और गुणवत्ता को अवधि से जोड़ कर देखने की दृष्टि ने पाठ्यचर्या-आधारित सुधारों और नवाचारों के प्रश्नों को गौण कर दिया है। स्कूली शिक्षकों की तैयारी से जुड़ा हमारा सवाल यह होना चाहिए कि वर्तमान परिस्थिति में शिक्षकों की तैयारी के लिए पाठ्यचर्या की रूपरेखा क्या हो? किस प्रकार से इसके द्वारा सिद्धांत और अभ्यास में मज़बूत अन्तःसंबंध को स्थापित किया जाए? कैसे प्रशिक्षु-शिक्षकों को सीखने-सिखाने के विभिन्न परिवेशों जैसे- विद्यालय, समुदाय के अनौपचारिक निकाय, सीखने के अन्य संस्थागत निकायों के साथ कैसे जोड़ा जाए? वे कौन से तरीके हों जिनसे विद्यालय-विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय के विभिन्न संकायों के बीच संवाद का विकास हो? किस प्रकार से उन्हें अवसर मिले कि

वे बच्चों के विकास के महत्त्व को समझ सकें? कैसे उनकी भाषिक, तकनीकी और संप्रेषण के विविध माध्यमों में कुशलता का विकास किया जाए?

शिक्षक-शिक्षा की इस बहस को एक अन्य दृष्टि से भी देखने की ज़रूरत है। पूर्व में विद्यालयी शिक्षा को सभी बच्चों तक पहुँचाने के लिए प्रयासों में आई तेज़ी ने शिक्षकों की माँग बढ़ा दी। इसी बढ़ी माँग ने शिक्षक-शिक्षा के लिए विद्यार्थियों के रुझान को भी बढ़ा दिया। इस प्रकार से बढ़ी माँग की पूर्ति के लिए शिक्षक-शिक्षा का जो ढाँचा विकसित हुआ वह केवल औपचारिकता को पूरा करने मात्र तक ही सीमित होकर रह गया क्योंकि उसके पास अपेक्षित संसाधनों का अभाव था। इसे ध्यान में रखें, तो शिक्षक-शिक्षा में बदलाव की वर्तमान आहट में यह सवाल प्रासंगिक हो जाता है कि क्या संसाधन और संरचना के स्तर पर हम द्वि-वर्षीय या इस प्रकार के किसी अन्य प्रगतिशील मॉडल को लागू कर पाने की स्थिति में हैं? यदि हम इस प्रकार का मॉडल लागू भी करते हैं, तो निजी प्रबंधन के अंतर्गत आनेवाली संस्थाओं में इनके अनुपालन और क्रियान्वयन की निगरानी कैसी होगी? इस प्रकार से हमें पाठ्यचर्या में सुधार के साथ संसाधन आधार की उपलब्धता और उसके विकास पर भी गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है। इसके लिए विकसित और शिक्षक-शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी संस्थाओं के साथ निजी और अल्पविकसित शिक्षक-शिक्षा संस्थाओं के संदर्भ का भी ध्यान रखना होगा। यह सुनिश्चित करना होगा की द्वि-वर्षीय पाठ्यचर्या सही अर्थो में धरातल पर क्रियान्वित हो।

एक महत्वपूर्ण पक्ष जिसे संज्ञान में लेने की आवश्यकता है कि शिक्षक-शिक्षा का जो भी प्रारूप सामने आए वह शिक्षक को तैयार कर देने वाली 'प्रथम और आखिरी डिग्री' की पारंपरिक छवि को तोड़े। वह 'शिक्षक-शिक्षा की डिग्री ली और स्कूल में शिक्षक बन गए' की मानसिकता को तोड़ते हुए भावी शिक्षकों को शिक्षा के विमर्शों से जोड़ते हुए शिक्षा के अध्येता और शोधकर्ता बनने के लिए प्रेरित करें। अन्यथा शिक्षक-शिक्षा की डिग्री का केवल सांकेतिक महत्व ही रहेगा, जो शिक्षक बनने के लिए 'गेटपास' है। जबकि इस गेटपास से प्रशिक्षु-शिक्षक एक ऐसे व्यावसायिक जीवन में प्रवेश करेगें जहाँ ज्ञान का अप-टू-डेट होना और नई प्रवृत्तियों और सूचनाओं की जानकारी होना अपरिहार्य है। इसी के समांतर एक और महत्वपूर्ण सवाल है कि किस प्रकार से शिक्षा के शोध कार्यों के द्वारा हमारे अभ्यास के लिए नयी दिशाएँ मिलें? इसके लिए हमें, शिक्षकों को शोध के क्षेत्र में आगे लाने के लिए प्रयास करना होगा। *उन पर शोध करने के बजाय उन्हें शोध करने का मौका देना होगा।* ऐसा करने पर ही वे खुद नवाचार के माध्यम और मार्गदर्शक बनेगें। यह भी सोचना होगा कि जिन विषयों पर शोध किए जाएँ वे न केवल अकादमिक दृष्टि से महत्व के हों बल्कि वे विद्यालयों के शिक्षकों के दैनिक अभ्यास के लिए मददगार भी साबित हों। वे उनके अभ्यास को सीधे तौर पर मज़बूत करने का रास्ता सुझाएँ।

भाषा केवल संचार का माध्यम ही नहीं है बल्कि वह विचारों के विकास को प्रभावित करने वाला एक मुख्य आधार है, जो यथार्थ को रचती है।

Chapter 1.indd 8 6/26/2015 2:52:15 PM

भारत में जहाँ लगभग 40 प्रतिशत लोगों द्वारा हिंदी का व्यवहार किया जाता है, वहाँ हिंदी माध्यम में शिक्षक-शिक्षा का अवसर देना बहुत मायने रखता है। इसका कारण यह है कि हम जिस भाषा में सोचते हैं, उसी भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयोग करने पर मौलिक सोच, मनन क्षमता और आलोचनात्मक दृष्टि संवर्धित करते हैं। इस प्रकार से हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षक-शिक्षा दिए जाने पर भाषा अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ सशक्तिकरण का भी माध्यम बनेगी।

शिक्षा मूलतः मानवीय मूल्यों जैसे-शाँति, स्वतंत्रता, बंधुत्व, सामाजिक न्याय के पोषण पर केंद्रित होनी चाहिए। *सीखने का उद्देश्य अनवरत सीखने की ललक जगाना और विद्यार्थियों की रचनात्मकता को दिशा देना होना चाहिए।* इसी के समांतर हमारी शिक्षक-शिक्षा को भी इसी उद्देश्य से अभिप्रेरित होना चाहिए और शिक्षा के इन लक्ष्यों को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए। इस प्रकार से शिक्षक-शिक्षा के बदलाव से जुड़े सवालों के केंद्र में उच्च शिक्षा में शिक्षक-शिक्षा के स्थान, शिक्षक-शिक्षा की गुणवत्ता के लिए पाठ्यचर्या की पुर्नसंरचना और उसके क्रियान्वयन के पक्षों को मजबूत करने के रास्तों तथा शिक्षा और सामाजिक सरोकारों के बीच सार्थक संवाद की स्थापना की संभावना को रखना चाहिए। इस प्रकार के प्रयासों से ही हम एक ऐसे भावी शिक्षक की कल्पना कर सकते हैं, जो स्वयं में सशक्त और आलोचनात्मक दृष्टि रखते हुए वृहत्तर सामाजिक संदर्भों में अपनी भूमिका समझ सके, जो विद्यार्थियों की चेतना के प्रस्फुटन, उनकी जिज्ञासाओं को प्रेरित करने का माध्यम बने, उनकी सृजनात्मकता और सीखने की इच्छा का पोषण कर सके।